श्री दिगम्बर जैन मन्दिर की ५० वीं स्वर्ण जयन्ती के उपलक्ष पर प्रकाशित

जैन मंजरी

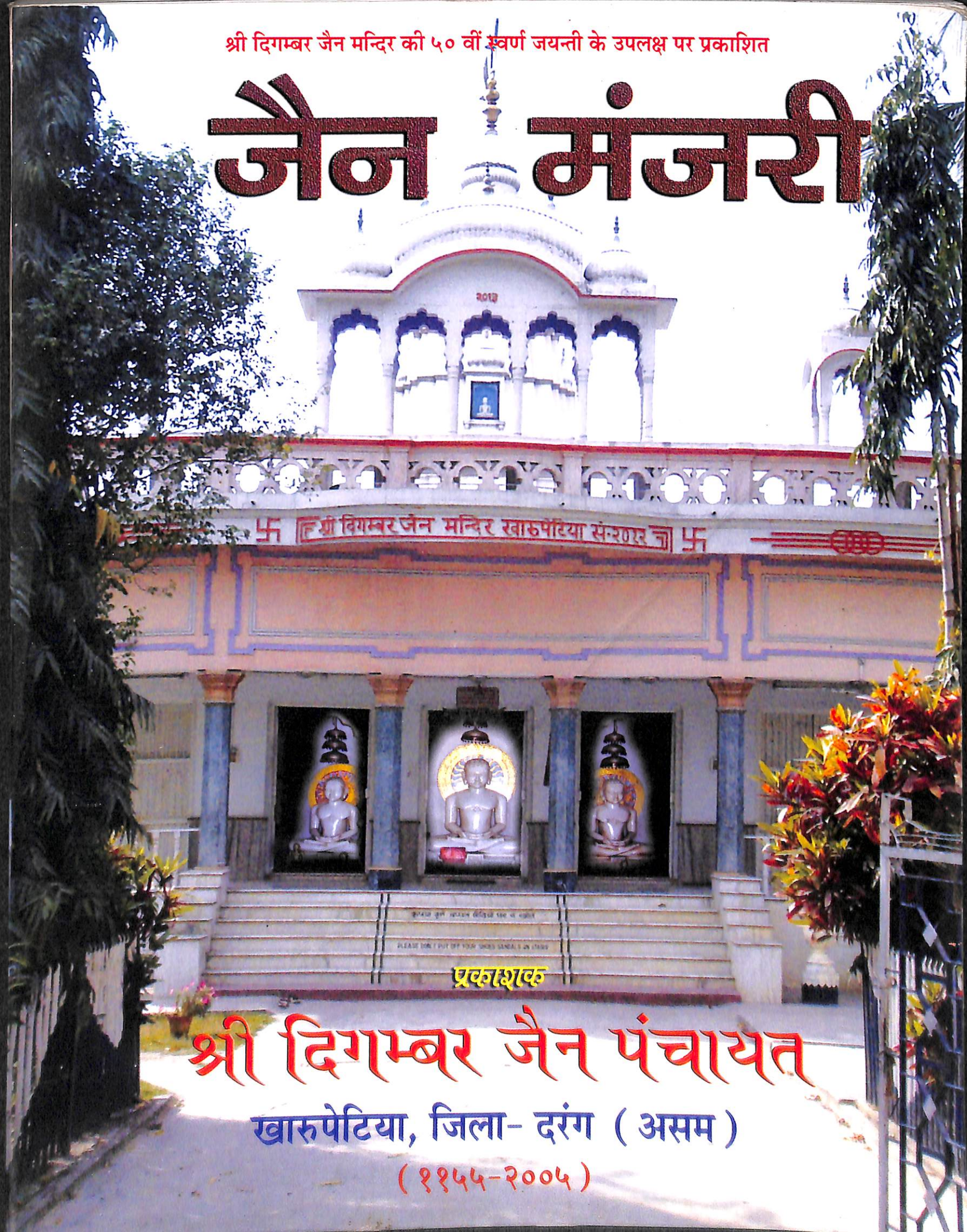

प्रकाशक

श्री दिगम्बर जैन पंचायत

खारुपेटिया, जिला- दरंग (असम)

(११५५-२००५)

लिए नग्नता कितनी जरूरी है, आप जैसे विचारशील व्यक्ति कल्पना कर सकते हैं। वस्त्रों में व्यक्ति अपनी कमजोरी छुपा लेता है। जिस प्रकार मुखौटे से व्यक्ति का असली चेहरा ढंक जाता है उसी प्रकार वस्त्र व्यक्ति की असलियत को उजागर नहीं होने देते।

आपके मन में प्रश्न हो सकता है कि मुनि श्री आपकी सब बातें अच्छी हैं लेकिन समय बदल गया है, देश ने कितना विकास किया है आप अपने लिये नहीं तो कम से कम समाज के लिये ही सही, लंगोटी लगा लो, क्या फर्क पड़ता है? आपकी बात पर मुझे एक प्रसिद्ध आख्यान सुना ही होगा, जिसमें एक संत जो कि एकदम दिगम्बर अवस्था में साधना करते थे, उनकी उत्कृष्ट साधना से प्रभावित होकर वहां का राजा भी उनका शिष्य हो गया था। राजा के गुरु नग्न रहे यह बात राजा को खलती थी। एक दिन राजा ने एकान्त में गुरु से सविनय निवेदन किया - गुरुदेव, एक छोटी सी लंगोटी लगा लें तो उत्तम रहेगा। राजा का अत्यन्त आग्रह देखकर संत ने राजा के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। अब तक वे नग्न साधना करते थे लेकिन अब लंगोटी आ गई (अब देखना यह है कि आगे और क्या आता है) अब तक तो वे निश्चिंत थे, कोई चिंता फ्रिक नहीं थी लेकिन अब चिंता हो गई लंगोटी को धोने की, सुखाने की।

एक दिन संत की कुटिया में कहीं से एक चूहा आ गया। संत की कुटिया में खाने को कुछ चीज तो थी नहीं, सो चूहे ने लंगोटी कुतर दी। संत बड़े परेशान हुए। दूसरी लंगोटी बनवायी उसकी भी यही दशा हुई। राजा ने कहा-महाराज चूहे की समस्या का हल नई लंगोटी नहीं, अपितु बिल्ली है। एक बिल्ली पाल लो जिससे रोज का रोना ही मिट जाये। हुआ भी ऐसा। संत ने बिल्ली पाल ली - दो चार दिन तो चूहों ने उत्पात नहीं किया, पांचवें दिन से फिर उपद्रव शुरू हो गया क्योंकि बिल्ली को कुछ खाने को नहीं मिल रहा था। वह अधमरी सी हो गई थी। न चल सकती, न दौड़ सकती थी। संत फिर परेशान हो गये। राजा ने परेशानी का कारण पूछा और कहा - गुरुदेव एक गाय दिये देता हूँ। उसको अपने पास रखना, स्वयं दूध पीना और बिल्ली को भी पिलाना। सो अब बिल्ली के बाद गाय आ गई। गाय ने दो-चार दिन दूध दिया फिर टांय-टांय फिस, चूँकि उसे खाने-पीने को कुछ भी नहीं मिलता था। समस्या वही की वही थी। पुन: विकट समस्या आ गई? राजा ने कहा-महाराज, आपकी कुटिया के निकट मेरी कुछ उपजाऊ जमीन पड़ी है आप वहाँ पर खेती कर लें, जिससे अनाज भी पकेगा और हरी-भरी घास भी होगी। अनाज आप खाना, घास गाय खायेगी। आखिर संत ने राजा की बात मान ही ली। बेचारे संत थे-अब खेती करने लगे। दिन भर खेती करते, शाम को थके-हारे आते, भूखे ही सो जाते। भिक्षा मांगने का समय ही नहीं मिलता। संत ने राजा से कहा - अब क्या करना चाहिए? राजा बोला- बस गुरुदेव, किसी सुयोग्य कन्या से विवाह कर लें। सब ठीक हो जायेगा। वह भी हो गया। संत का जीवन नर्क का पर्याय बन गया। उन्होंने वे कारण खोजा तो कारण निकला वही एक छोटी-सी लंगोटी, जिसके लिए बिल्ली आई और वह बिल्ली पूरी दिल्ली को लेकर आई। कहने का मतलब आप समझ ही गये होंगे। अब आपका यह प्रस्ताव कि एक छोटी सी लंगोटी लगा ले तो क्या फर्क पड़ता है, कितना बेबुनियाद है। आप स्वयं कल्पना कर सकते हैं।

नग्नता को सिर्फ जैन धर्म ने स्वीकार किया ऐसी बात नहीं है। सभी धर्मों में नग्नता का बहुमान दिया है। उपनिषद के कथनानुसार हिन्दू धर्म के परम हंस गुरु शुकदेव, वगैरह नग्न ही साधना किया करते थे। जैन दर्शन के अनुसार महात्मा बुद्ध स्वयं साधना के प्रारम्भिक काल में दिगम्बर जैन मुनि थे किन्तु जब दिगम्बर की उत्कृष्ट साधना में कठिनता दिखी, तब उन्होंने लाल वस्त्र धारण करके बौद्ध धर्म की स्थापना की। मुस्लिम धर्म में भी सरमद फकीर के नग्न रहने का उल्लेख मिलता है। ईसाईयों में आदम हब्बा के नग्न रहने और ज्ञान फल खाने का आख्यान सर्व विदित ही है। इस प्रकार हम देखते हैं कि दुनिया के सभी धर्मों में किसी न किसी रूप में आचार्य श्रेष्ठ श्री कुन्द-कुन्द स्वामी को कहना पड़ा : *'पडिवज्जदु सामण्णं जदि इच्छदि दुक्ख परिमोक्ख' यदि दुख: से मुक्ति चाहते हो तो श्रमण अर्थात मुनि धर्म स्वीकार करो। क्योंकि आध्यात्मिक सुख एक मुनि को है अर्थात् वह सुख: न देव, न इन्द्र और न चक्रवर्ती को है। (न सुखं देव राज्य न सुखं चक्रबर्तिन: यत्सुखं बीतरागस्य भुनेरकान्त बासिन:)*

भगवान महावीर स्वामी ने कहा कि साधु साधनों से नहीं साधना से होता है, भागने से नहीं भावना से होता है, उपकरण से नहीं आचरण से होता है। नग्न होना कोई बच्चों का खेल नहीं है, हँसी मजाक नहीं है बल्कि परमोत्कृष्ट साधना का प्रतीक है। क्या यह आश्चर्य नहीं कि आज भी इस कलिकाल में ऐसे उत्कृष्ट साधक इस भारत भूमि पर यत्र-तत्र विचरण करते हुए दिखाई दे रहे हैं। आईये इनके चरणों में बैठकर आत्मा का अनुसंधान करें।

□□□

"Essence of Jain Philosophy"

Parimal Kumar Dutta
Lecturer, Kharupetia College

India is the birth place of four major religions. They are Hinduism, Jainism, Buddhism and Sikhism. Jainism holds a certain notable place among the religions systems and philosophies of its native land and even of the whole world.

The Jainas recount the names of 24 Tirthankaras through whom their faith is believed to have come down from unknown antiquity. The first of these Tirthankaras was Rishabhadeva. The 22nd was Neminath. The 23rd was Parshanath. The twenty fourth (24) and the last was Vardhaman, also styled Mahavira. The present Jain religion was his contribution. Jain religion developed and spread through the preachings and words of all these Tirthankaras.

Besides Buddha, Mahavir was a contemporary of three other founders among the world's living religions Confucians and Lao-tze in China and Zoroaster in Persia. Mahavira was born in 599 B.C. His father's name was Siddhartha and mother's name was Trishla. Mahavira was born the second son of a petty rajah (Chieftain) in north-east India, in the town of Baisali.

Mahavir was brought up in inxurious surroundings "Mahavira was attended by five nurses : a wet nurse, a nurse to keep him clean, one to dress him, one to play with him, one to carry him, being transferred from the lap of one nurse to that of another."

When Mahavir was sent to school in his childhood, his teacher found that the new disciple was knowledgeable enough and needed no formal learning. Not only that, the teacher also found answers from him to many of his own problems. Because of the profound knowledge of the child, the teacher named him Sanmati.

In his own life time, Mahavira faced great difficulties and yet he never lost his equilibrium. Therefore, people started addressing him as Mahavira.

After the death of his parents he decided to be a religions ascetic. He cast aside his fine cloths. He gave away all his property. He plucked out his hair in five handfuls and vowed absolute holiness.

He wandered about receiving injuries from men and beasts. He underwent strange self-imposed bodily sufferings. When he gained complete self-control over his body and over the world, Mahavira changed from being a solitary ascetic to a leader and teacher of many monks. He continued preaching to the end of his life.

A while after Mahavira, Jainism got divided into two sects — Digamber and Shwetamber.

Digambar means "Dik" (Direction) "Ambar" (Clothes), Sky-clod, i.e. nude. Jain sadhus do not keep any belonging or property. They have nothing that can be kept tied in a knot. This is why they are called "Nirgranth". This is the supreme example of selflessness and sacrifice.

"Shwetambar" means one whose covering is a cloth. They do not place any special significance on nudity. The stateless of their Gods wear something. There is no other basic difference between the two sects.

"About the year 310 B.C. when the mendicant community was suffering from a great famine in north India, a party of perhaps 12000 Jains, under the leadership of Bhadrabahu, emigrated to Mysore, in South India. In that warmer region, where less clothes are needed, a stricter asceticism has been observed than by the Jains in the north. The two sections split definitely about the year 82 A.D., on the trouble some question of wearing clothes. Ever

since that date most of the Jains who live in the cooler regions north of the Vindhya Mountains have belonged to the white-clad svetambara sect, while the Jains in the Southern half of India have belonged to the naked Digambara sect"

The preachings of Jainism are primarily codes of conduct derived from the teachings of Parshwanath and Mahavira. According to Parshwanath, there are four great principles —

(1) Ahimsa (2) Satyam (3) Asteyam (4) Aparigraha.

Mahavira also added Brahmacharya or celibacy. Thus Jainism got five great principles — (1) Ahinsa (2) Satyam (3) Asteyam (4) Aparigraha (5) Brahmacharyam.

The word "Jina" etymologically means a conqueror. It is the common name applied to the twenty four teachers, beacuse they conquered all passions and attained liberation. The followers of the "Jinas" or Tirthankaras or Arhant are called Jainas.

The basic features of Jainism may be summarised as follows —

(a) The Jainas do not believe in God.

(b) They adore the Tirthankaras or the founders of the faith.

(c) They do not admit the supremacy of the Vedas.

(d) The primary principle of Jainism is Non-violence.

(e) They give importance on action.

(f) They do not believe in casteism.

(g) They give higher status to women.

(h) Man has got an eternal concious substance within him known as the Jiva.

(i) Man suffers due to his own karmas and there is no other explanation of human suffering.

(j) Liberation can be attained not by offering rituals to gods and goddesses, but by following the path of three jewels — (a) Rightfaith (b) Right Knowledge (c) Right Conduct.

The religion of the Jaina is a religion of the strong and the brave. It is a religion of self-help. In this hour of crisis, the world requires the proper application of the basic principles of Jainism for establishing world-peace.

Sources :

1. Sacred books of the East :- Max Muller.
2. The World's living religions :- Robert Ernest Hume.
3. One God :- Dr. B. K. Modi.
4. An Introduction to Indian Philosophy :- Dr. S. C. Chatterjee, Dr. D. M. Dutta
5. Comparative religion :- K. N. Tiwari.
6. A History of Indian Philosophy :- J. Sinha.
7. The Cultural Heritage of India :- R. K. Mission Institute of Culture.

• • •

Lord Mahavira Said

- Consider all living beings like your own self.
- An elephant and an ant are alike souled living beings.
- They all love life
- All the beings long to live, no one wants to die.
- Just as I dislike pain, so all other beings dislike pain.
- A Shramana (Jain) is one who considers all living beings equal and alike, and neither kills them nor gets them killed by others.
- Be always ready to help and protect the helpless and those in distress.
- Have compassion for all living beings.
- Ahinsa is the hightst religion.
- Self-control with respect to all living beings is Ahinsa.
- Ahimsa is the very essence of the spirit.
- Such is the Noble Goddess Ahinsa.

Do not wait for the best idea implement the better idea and the best will follow.

भगवान महावीर की धर्म देशना

ऊषा देवी रारा
(नलबाड़ी)
अध्यक्षा - अखिल भारतवर्षीय दि. जैन महिला संगठन, पूर्वांचल शाखा

राजा सिद्धार्थ और रानी त्रिशला को लोकवन्द्य महावीर को जन्म देने का अचिन्त्य सौभाग्य प्राप्त हुआ। जिस दिन महावीर का जन्म हुआ वह चैत सुदी तेरस का पावन दिवस था। भारतवर्ष के अत्यन्त रमणीक पुण्य विदेह देश (बिहार प्रान्त) के 'कुण्डपुर' नगर में जन्म हुआ था, २७ मार्च ५९८ ई. पू.।

महावीर के जन्म लेते ही सिद्धार्थ और उनके परिवार ने पुत्र जन्म के उपलक्ष में खूब खुशियाँ मनाई। गरीबों को भरपूर धन-धान्य आदि दिया और सबकी मनोकामनाएँ पूरी की तथा याचकों को दानादि दिया।

महावीर बाल्यावस्था में ही विशिष्ट ज्ञानवान और अद्वितीय बुद्धिमान थे। बड़ी से बड़ी शंका का समाधान कर देते थे। महावीर इस तरह बाल्यावस्था को अविक्रान्त कर धीरे-धीरे कुमारावस्था को प्राप्त हुए और कुमारावस्था को भी छोड़ कर वे पूरे ३० वर्ष के युवा हो गये। राजकुमार वर्द्धमान जन्म से ही सर्वांग सुन्दर थे। जब उन्होंने किशोर अवस्था समाप्त कर यौवन में पदार्पण किया, उनके असाधारण ज्ञान, बल, पराक्रम, तेज तथा यौवन की वार्ता प्रसिद्ध हो चुकी थी, अतः अनेक राजाओं की ओर से वर्द्धमान के पाणिग्रहण के प्रस्ताव आने लगे। कलिंग नरेश राजा जितशत्रु की सुपुत्री राजकुमारी यशोदा सर्वगुण सम्पन्न नवयुवती थी। अतः राजा सिद्धार्थ ने वर्द्धमान का विवाह उसी के साथ करने की तैयारी करने लगे।

अपने विवाह की बात जब वर्द्धमान को ज्ञात हुई उन्होंने उसे स्वीकार न किया। वह विवाह के बन्धन में बँधने के लिये तत्पर न हुए।

राजकुमार वर्द्धमान ने कहा कि मैं जगत के जीवों को संसार बन्धन से मुक्त होने का मार्ग बताने आया हूँ, फिर मैं स्वयं गृहस्थाश्रम के बन्धन में क्यों पड़ूँ? फैली हुई हिंसा, अज्ञान, भ्रम, दुराचार, अत्याचार का संसार से निराकरण करने का महान कार्य मेरे सामने है।

अपने पुत्र का उच्च ध्येय सिद्ध करने के लिए ब्रह्मचर्य की अटल भावना जानकर रानी त्रिशला और राजा सिद्धार्थ चुप रह गये। हित अहित की वार्ता और कर्त्तव्य का निर्देश हम उसे समझायें। वो सारे जगत को समझा सकता है अतः वह जिस पथ में आगे बढ़ना चाहता है, हमें उसमें बाधा डालना उचित नहीं। इस तरह राजभवन में रहते उन्होंने अट्ठाइस वर्ष, सात मास, बारह दिन का समय व्यतीत किया। वर्द्धमान को एक दिन अचानक अपने पूर्व भवों का स्मरण हो आया कि मैं पूर्व भव में सोलहवें स्वर्ग का इन्द्र था। उससे पूर्वभव में मैंने संयम धारण कर तीर्थंकर प्रकृति का वध किया था, जिसका उदय इस भव में होने वाला है।

इस समय संसार में धर्म के नाम पर पाप और अत्याचार फैलता जा रहा है, अतः पाप और अज्ञान को दूर करने के लिये संयम ग्रहण करना चाहिए।

राजकुमार महावीर सब तरह के सुखों को त्यागकर निर्ग्रन्थ अचेत हो वन वन में, पहाड़ों की गुफाओं में समाधि लगाकर अहिंसा की साधना करने लगे। बाहरी विचारों से मन को रोककर मौन भाव से अचल आसन में महावीर जब आत्म चिन्तन में निमग्न हुए उसी समय उनके मन पर्याय ज्ञान का उदय हुआ जो निकट भविष्य में केवल ज्ञान के प्रकट होने का सूचक था। यह महावीर के आत्म अभ्युदय का प्रथम चिन्ह था।

जब वे आत्म ध्यान से निवृत्त हुए और शरीर को कुछ भोजन देने का विचार हुआ तो निकट के गाँव में चले गये। विधि अनुसार शुद्ध विधि से भोजन मिल गया तो निस्पृह भावना से थोड़ा सा भोजन कर लिया तथा पुनः तपस्या करने वन में पर्वत पर चले गये। ऐसी कठोर तपस्या करते हुए देश देशान्तर में भ्रमण करते रहे नगर या गाँव में केवल भोजन के लिये जाते। इसके अतिरिक्त शेष समय किसी एकान्त स्थान या निर्जन वन में बिताते। वन में भयानक हिंसक पशु उनके निकट आते पर उन्हें देखते ही उनकी हिंसक

धर्म के लिये मनुष्य लड़ता है झगड़ता है दंगा फसाद करता है।